छन्दोगान

डॉ. कमला पाण्डेय

5.2





छन्दोगान

कमला पाण्डेय



प्रस्तुति

संस्कृत-मातृ-मण्डलम्



शारदा संस्कृत संस्थान

वाराणसी-२२१००२

प्रकाशक :

शारदा संस्कृत संस्थान

सी० २७/५९, जगतगंज, वाराणसी-२२१००२

दूरभाष -०५४२-२२०४१६८, मो०-९८३९२४५३६५

e-mail : sharadabhawan@yahoo.co.in

website : www.sharadasansthan.in

ISBN : 978-93-81999-09-7

प्रथम संस्करण : २०१२

मूल्य : ५०/-

संगणक :

न्यूमापैस कम्प्यूटर्स

चौकाघाट, वाराणसी-२

दूरभाष : ०९८३८९२७०९५

मुद्रक :

प्रभा प्रेस

चौकाघाट, वाराणसी-२

दूरभाष : ०९८३८९२७०९५

प्ररोचना

संस्कृत-मातृ-मण्डलम् द्वारा आयोजित छन्दोगान कार्यशाला का सम्पूर्ति-सत्र ज्ञान-प्रवाह में आयोजित *'छन्दोगान : सप्रयोग व्याख्यान'* के रूप में सम्पन्न हुआ। इस कार्यक्रम को *पारस क्रियेशन्स-मुम्बई* द्वारा फिल्माया गया, तत्पश्चात् *गङ्गा म्यूजिकल ग्रुप, वाराणसी* ने इसका वीडियो डी०वी०डी० के रूप में प्रस्तुत किया है। यह प्रयास संस्कृत साहित्य के अध्येताओं को छन्दों के सस्वर गान का प्रशिक्षण देने के लिए किया गया; जिसमें एकाक्षरा *श्रीः* से एकविंशत्यक्षरा (इक्कीस अक्षरों वाली) *स्रग्धरा* के सूत्रपाठ, गणपाठ एवं काव्यपाठ की त्रिवेणी प्रवाहित है।

वर्तमान युग में विज्ञान एवं तकनीकी की विधाएँ पाठ्यसामग्री को अधिक से अधिक संप्रेषणशाली बनाने में लगी हैं। इसी श्रृङ्खला में दृश्य-श्रव्य के मणिकाञ्चन संयोग से छन्दःशास्त्रीय अध्ययन को रोचक बनाने का प्रयत्न है। इससे संस्कृतानुरागी जन मनोरञ्जन पूर्वक सुगम रूपेण छन्दोगान करते हुए सरला सरसा-संस्कृत-वाणी को कण्ठहार बनायें। इस पवित्र लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सहायक के रूप में यह छन्दोगान पुस्तिका अध्येताओं को अर्पित है –

कमला पाण्डेय

मो.-९८८९७०७८२५

Prof. R.C. Sharma
Ex-Director General/V.C.
National Museum/Institute, New Delhi
Professor, Indian Art & Museology
Director, Bharat Kala Bhavan, B.H.U.



Hon. Director/Acharya
Jñāna-Pravāha
Centre for Cultural Studies & Research
Samne Ghat, Varanasi-221 005
Phone: 0542-2366326 Fax: 0542-2366971
E-mail : jpvns@satyam.net.in

Dated : September 18, 2005

Dear Dr. Pandeya,

Your demonstration lecture on Chandogana at Jñāna-Pravāha-Centre for Cultural Studies & Research on September 10, 2005 was a unique experience. It was an excellent harmony of metres, rhythm and correct recitation. The students trained by you for the occasion immediately picked up and followed. The audience was spellbound and eminent scholars present offered highly appreciating comments. They were of the view that such an effective and impressive presentation is a lifetime experience and the Jñāna-Pravāha should make Dr. Pandeya's demonstration lecture an annual feature.

The impact of your brilliant exposition of September 10 was clearly discerned in the following programme of Sanskrit Antyākṣari based on Kālidāsa's works held on September 17, 2005 also coordinated by you. The audience and students were full of praise for this event also.

I take the opportunity to express my deep gratitude for your laudable contribution to the academic pursuits of Jnana-Pravaha, and hope, this will continue in future as well.

With cordial regards,

Yours sincerely,

R.C. Sharma

Dr. Kamala Pandeya **(R.C. Sharma)**

संकेत-सूची

अभि०शा०	-	अभिज्ञान शाकुन्तलम्
उ०सू०	-	उणादि सूत्र
ऋतु सं०	-	ऋतुसंहार
का०द०	-	काव्यादर्श
किरात०	-	किरातार्जुनीयम्
कु०सं०	-	कुमारसंभवम्
गं०द०	-	गङ्गादण्डकम्
छ०मं०	-	छन्दोमञ्जरी
छ०उ०वि०	-	छन्दः शास्त्र का उद्‌भव और विकास
प्रे०र०सं०मी०	-	प्रेम रसायन और सङ्गीत मीमांसा
ध०कं०	-	धरा कम्पते
ना०शा०	-	नाट्यशास्त्र
भ०शं०आ०भु०	-	भगवान् शङ्कराचार्य आविर्भूयात् पुनर्भुवि
माल०	-	मालविकाग्निमित्रम्
मेघ०	-	मेघदूत
रघु०	-	रघुवंश
र०गं०	-	रक्षत गङ्गाम्
रस गं०	-	रसगङ्गाधर
वर्ण गी०	-	वर्णमाला गीतावलि
वृ०र०	-	वृत्तरत्नाकर
वृ०र०ना०	-	वृत्तरत्नाकर नारायणी
वृ०र०र०	-	वृत्तरत्नाकर रत्नप्रभा
विक्रम०	-	विक्रमोर्वशीयम्
श्रुत०	-	श्रुतबोध
सं०गौ०गा०	-	संस्कृत-गौरव-गानम्
द्र०	-	द्रष्टव्य



अनुक्रमणिका



भूमिका

रमणीयार्थ-प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्-यह काव्यलक्षण प्रस्तुत करते हुए रसगङ्गाधरकार पण्डितराज जगन्नाथ ने बताया कि रमणीयता का तात्पर्य लोकोत्तर आह्लादजनकता में है।[1] अर्थात् जो अलौकिक आनन्द प्रदान करे वही रमणीय है। यही रमणीयता छन्दोविद्या में सलिल-चन्दनवत् ओत-प्रोत है। वास्तव में छन्दों के वर्ण विन्यास से संस्कृत भाषा में जैसा सुन्दर माधुर्य प्रवाह बन पड़ता है वैसा अन्य भाषाओं में नहीं दिखाई देता। यद्यपि उर्दू भाषा अपने चमत्कारिक अर्थ से सहृदयों के चित्त को सहज ही मोहित करती है तथापि उस भाषा में उतना छन्दोवैविध्य नहीं है जितना संस्कृत में है। इसीलिए भारती नाम से भारत में विख्यात देववाणी संस्कृत अपने वाग्वैभव से ऋग्वेद काल से लेकर आज तक पुण्यपीयूष-प्रवाह को धारण करती हुई, लघु गुरु वर्णों के छन्दः शास्त्रीय यमातादि गणों के विन्यास से खनखनाती हुई, छन्दोगान की विधा में आरोह एवम् अवरोह क्रम से श्रुतिसुभग स्वरलहरी को लहराती हुई, यति एवं विराम के नियमों से संयमित होती हुई, अनुप्रास यमकादि अलङ्कारों की छटा बिखेरती हुई, नवरसरुचिर पानकरस पिलाती हुई सर्वातिशायिनी बनकर सुशोभित है।

छन्दों के ही कारण इस भाषा के रुचिर पदविन्यास में मृदु स्पन्दन है, सहज आवर्तन है; एक ओर अकारादि स्वर व्यञ्जनों का मञ्जुष्क्वणन श्रोता को अनायास अपनी ओर खींचता है, दूसरी ओर ह्रस्व दीर्घ मात्राओं में विन्यस्त पदों की छन्दोबद्धता सङ्गीत की राग रागिनियों में स्वतः तैरने लगती है। वाद्य-यन्त्र की स्वरलहरी की भांति श्रुतिसुभग गीतिमयता इस भाषा का प्राण है।

---

१. रसगं० - प्रथम आनन, पृ० १०-११

इस भाषा की लयात्मकता अद्भुत है। संस्कृत के प्रारम्भिक शिक्षण हेतु अकारादि एवं ककारादि वर्णों का विन्यास इस प्रकार किया जा सकता है, जिससे मधुर गीतावली बन जाती है और बालकों के मृदुल मस्तिष्क में भाषा के संस्कार सहज ही बैठ जाते हैं, जैसे –

अ	अरविन्दम्	आ	आगारः
इ	इर्वारुः	ई	ईशानः
उ	उलूखलम्	ऊ	ऊर्णायुः, आदि[1]
क	कदली	का	काकः
कि	किरणः	की	कीरः
कु	कुम्भः	कू	कूर्मः
कृ	कृषकः	के	केशः
कै	कैलाशः	को	कोशः
कौ	कौपीनं	कं	कंसः, आदि[2]

छन्दः शब्द की व्युत्पत्ति *'चदि आह्लादने दीप्तौ च'* धातु से असुन् प्रत्यय करने पर होती है। च को छ आदेश और नुम् आगम करने पर छन्दस् शब्द निष्पन्न होता है।[3] उससे यह अर्थ निकलता है कि जो आह्लादित-आनन्दित करता है वह छन्द है। *"भावों का एकत्र संवहन (संवरण) प्रकाशन तथा आह्लादन छन्द के मुख्य तत्त्व हैं। इस दृष्टि से रुचिकर और श्रुतिप्रिय लययुक्त वाणी ही छन्द कही जाती है।"*[4]

छन्दस् वेद का अपर पर्याय है। छः वेदाङ्गों में छन्दस् अन्यतम है जो वेदपुरुष का चरण कहलाता है। उसी से गतिशील होने के कारण *नितरां गतिः* – इस व्युत्पत्ति से वेद को निगम कहते हैं।[5]

---

१. वर्ण० गी०, पृ० २

२. वही, पृ० १७

३. चन्देरादेश्च छः – उ०सू० ६५८

४. प्रे०र०सं०मी०, पृ० ७२६

५. छ०शा०उ०वि०, पृ० २३७

छन्दःशास्त्र के आचार्यों की सुदीर्घ परम्परा है। शिव-बृहस्पति-इन्द्र -शुक्र-माण्डव्य-सैतव-यास्क-पिङ्गल - यह क्रम परिगणित किया गया है -

छन्दोगानमिदं भवाद् भगवतो लेभे सुराणां गुरुः।
तस्माद् दुश्च्यवनस्ततोऽसुरगुरुर्माण्डव्यनामा ततः।।
माण्डव्यादपि सैतवस्तत ऋषिर्यास्कस्ततः पिङ्गलः।
तस्येदं यशसा गुरोर्भुवि धृतं प्राप्यास्मदाद्यैः क्रमात्।।[1]

आचार्य पिङ्गल ने छन्दोवितान को व्यापक आयाम दिया। अविच्छिन्न छन्दः शास्त्रीय आगम के सम्प्रदाय प्रवर्तक शेषावतार भगवान पिङ्गल नाग हैं।[2]

उनके विषय में एक रोचक कथा किम्बदन्ती के रूप में उपलब्ध है जो इस प्रकार है -

एक बार शेषनाग जलराशि से बाहर निकल कर धरती पर वसन्त के प्रभात की धूप और वायु का आनन्द ले रहे थे। इसी समय भगवान् विष्णु के वाहन और शेषनाग के शत्रु गरुड़ वहां आ पहुंचे। अच्छा अवसर जान कर उन्होंने शेषनाग को पकड़ लिया। पहले तो शेषनाग घबड़ाये, किन्तु फिर उनकी बुद्धि ने काम किया। उन्होंने गरुड़ से कहा - इस संसार में छन्दः शास्त्र का जानकार केवल मैं ही हूं। यदि आप मुझे खा लेंगे तो संसार से छन्दः शास्त्र का लोप हो जायेगा। गरुड़ से उन्होंने प्रार्थना की कि यदि उन्हें खाना ही है तो खा लें, किन्तु इसके पहले उनसे छन्दःशास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर लें।

गरुड़ इस शर्त पर तैयार हो गये कि छन्दःशास्त्र का वर्णन पूर्ण होने पर शेषनाग भाग न जाँय। शेषनाग ने कहा - वे बिना पूर्व सूचना के नहीं जायेंगे। गरुड़ के समक्ष शेषनाग ने छन्दःशास्त्र का वर्णन इतनी

---

१. पिङ्ग०सू०-टीका यादव प्र० छ०शा०उ०वि०, पृ० ६ में उद्धृत

२. छ०शा०उ०वि०, पृ० ६६

मधुरता से किया कि वे (गरुड़) मन्त्र मुग्ध हो गये। भागने के पूर्व शेष नाग ने भुजङ्गप्रयातम् का चार बार उच्चारण किया और धीरे से जल में सरक गये। जब गरुड़ का ध्यान टूटा तो उन्होंने धोखा देने का आरोप लगाया। तब शेषनाग ने अपनी सफाई देते हुए कहा कि वे भुजङ्गप्रयात पद द्वारा इस नाम के छन्द के वर्णन के साथ यह सूचना दे रहे थे कि अब वे जा रहे हैं।[१]

सम्पूर्ण छन्दःशास्त्रीय विस्तार को वैदिक और लौकिक दो भागों में बांटा गया है। गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पङ्क्ति, त्रिष्टुप् और जगती - ये प्रमुख वैदिक छन्द हैं। लौकिक छन्दों के विषय में वृत्तरत्नाकरकार केदारभट्ट कहते हैं -

पिङ्गलादिभिराचार्यैर्यदुक्तं लौकिकं द्विधा।
मात्रा-वर्ण-विभेदेन छन्दस्तदिह कथ्यते।।[२]

मात्रा और वर्ण के भेद से लौकिक छन्दों के दो भाग हैं।

छन्दोमञ्जरीकार गङ्गादास के अनुसार -

पद्यं चतु पदी तत्र वृत्ति-जातिरिति द्विधा।
वृत्तमक्षरसंख्यातं जातिर्मात्राकृताभवेत्।।[३]

गद्य पद्यात्मक वाङ्मय में चार चरणों में उपनिबद्ध रचना पद्य कहलाती है, वह वृत्त तथा जाति दो प्रकार की होती है। जिसमें अक्षरों अर्थात् वर्णों की गणना की जाती है उसे वर्णिक छन्द तथा जिसमें मात्राओं

---

१. छ०शा०उ०वि०, पृ० ७२

२. वृ०र० १/४

३. छ०मं० १/४, वृ०र०ना० १/१३

की गणना होती है उसे जाति अथवा मात्रिक छन्द कहते हैं।[1] यह व्यवस्था लघु गुरु वर्णों के आधार पर होती है। एकमात्रा लघु (।) तथा द्विमात्रिक गुरु (ऽ) होता है। अनुस्वार, विसर्ग एवं संयुक्त पूर्व लघु गुरु हो जाता है। पादान्त में जो लघु आता है वह भी गुरु माना जाता है।[2]

वर्णवृत्त तीन प्रकार का होता है – सम, अर्धसम, विषम।[2] जिस पद्य में चारों चरण समान होते हैं वह समवृत्त है, जिसमें प्रथम तृतीय एक सा और द्वितीय चतुर्थ एक सा हो वह अर्ध सम और जिसमें चारों चरण भिन्न-भिन्न हों, वह विषम वृत्त होता है।

छन्दःशास्त्र अगाध है, इसका प्रस्तार भेद विपुल है। एक ओर यह अणोरणीयान् है तो दूसरी ओर महतो महीयान् है। शास्त्रकारों ने इसे विष्णु के समान व्यापक बताया है।[3] एक ओर तो एक-एक अक्षर के चार पादों से पूरा वृत्त (पद्य) बन जाता है तो दूसरी ओर दण्डक छन्द के प्रत्येक पाद में सत्ताइस अक्षर से आरम्भ होकर नौ सौ निन्यानवे अक्षर पर्यन्त अनुधावन होता है। एक अक्षर से छब्बीस अक्षर तक के छन्दों को क्रमशः उक्था, अत्युक्था, मध्या, प्रतिष्ठा, सुप्रतिष्ठा, गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पङ्क्ति, त्रिष्टुभ्, जगती, अतिजगती, शर्करी, अतिशर्करी, अष्टि, अत्यष्टि, धृति, अतिधृति, कृति, अतिकृति, आकृति, विकृति, संकृति, उत्कृति नाम से संज्ञापित किया गया है।[4] इनके अन्तर्गत अनेक वृत्तों को सलक्षण सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है।

---

१. अक्षरैर् गणना यत्र तद्वृत्तमिति कथ्यते।
मात्राभिर्गणना यत्र सा जातिरभिधीयते।। छ०म०, पृ० ११

२. छ०मं० १/६-११

३. म्यरस्त जभ्नगैर्लान्तरेभिर्दशभिरक्षरैः।
समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना।। छ०म० - १/७

४. वही १/१५-१६

संस्कृत भाषा के छन्दों का ज्ञान काव्य रचना और काव्य के अध्ययन - दोनों ही उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक है। आचार्य दण्डी के अनुसार छन्दों का ज्ञान काव्यरूपी अगाध सागर को पार करने के लिए नौका के समान है -

सा विद्या नौ तितीर्षूणां गभीरं काव्य-सागरम्।[1]

प्रस्तुत विवेचन एकाक्षरा *श्रीः* से एकविंशत्यक्षरा (२१ अक्षरों वाली) *स्रग्धरा* के लक्षणों एवं गणपाठ के आधार पर किया गया है। यह लघु प्रयास अध्येताओं को छन्दःशास्त्र के प्रारम्भिक ज्ञान के लिए उपयोगी होगा।

यमाताराजभानसलगा की सरलविधि से यगण मगण तगण रगण जगण भगण नगण एवं सगण का उपन्यास करते हुए लक्षणों के साथ-साथ गणपाठ की परिपाटी भी चलाई है जिससे सहज रूप में छन्दोगान किया जा सके। सप्रयोग व्याख्यान के क्रमानुसार स्वरचित प्रस्तुतियों को पहले और शास्त्रीय एवं काव्यगत उदाहरणों को आगे रखा गया है।



---

१. का०द० १/१२

श्रीः

ऽ

गू श्रीः ॥१॥[1]

जिसके प्रत्येक चरण में गुरु हो वह श्रीः है। यह एकाक्षरा वृत्ति है।

ऽऽ ऽऽ

गङ्गां वन्दे॥[2]

गङ्गा की मैं वन्दना करती हूँ।

श्रीस्ते। सास्ताम्॥[3]

सा = वह श्रीः (लक्ष्मी अथवा छन्द) तुम्हारी होवे।

स्त्री ॥२॥[4]

ऽ ऽ

गौ स्त्री

जिसके प्रत्येक चरण में दो गुरुवर्ण हों वह स्त्री नामक द्व्यक्षरा वृत्ति है।

---

१. छ०म०, पृ० १८

२. ध०कं०, पृ० १

३. छ०म०, पृ० १८

४. वही, पृ० १८

ऽऽ ऽऽ

गङ्गे मातः

नौमि प्रातः।।[1]

हे मां गङ्गे! मैं प्रातःकाल तुम्हें नमन करती हूँ।

ऽऽ ऽऽ

गोपस्त्रीभिः

कृष्णो रेमे।।[2]

गोपियों के साथ कृष्ण खेले।

देवं शर्वम्

ईशं वन्दे।।[3]

देव शर्व (शिव) ईश की वन्दना करती हूँ।

धृतिः ।।३।।

।ऽ ऽ ।ऽऽ

लघु स्यात् पदादौ

त्रिके या धृतिः सा।।[4]

जिसमें पद का आदि अक्षर लघु हो वह धृति छन्द है। अर्थात् यमांता (।ऽऽ) से प्रत्येक चरण का विन्यास है। यह त्र्यक्षरा वृत्ति है।

---

१. ध०कं०, पृ० १

२. छ०म०, पृ० १८

३. ना० शा अ० ५२-५३

४. वही अ० ५२-५३

पवित्र-प्रवाहा। धुनी नः पुनातु।।[1]

पवित्र प्रवाह वाली नदी हमें पवित्र करे।

उमेशः सुरेशः। तवायुः करोतु।।[2]

उमेश और सुरेश तुम्हें दीर्घजीवी बनायें।

भ्रमरी ।।४।।

I I S S   I I S S

लघुनी प्राग्। गुरुणी द्वे।

यदि पादे। भ्रमरी सा।।[3]

अर्थात् जिसके प्रत्येक चरण में प्रथम दो अक्षर लघु और बाद के दो अक्षर गुरु (IISS) हों, उसे भ्रमरी कहते हैं। यह चतुरक्षरा वृत्ति है।

गिरिशृङ्गे। सितधारा।

रमणीयोर्मिलहारा।।[4]

हिमालय पर्वत के शिखर पर श्वेतधारा लहरों रूपी हार से सुशोभित हो रही है।

वनखण्डे ह्यतिमत्तो

वनहस्ती परिखिन्नः।।[5]

अत्यन्त मतवाला वनैला हाथी वनप्रदेश में दुःखी है।

---

१. ध०कं०, पृ० १

२. ना०शा०, अ० ५८

३. वही, अ० ५८

४. ध०कं०, पृ० १

५. ना०शा०, अ० ५८

भूतलतन्वी ।।५।।

ऽ ।।ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

आदि पदे द्वे। यत्र हि नित्यम्।

ह्रस्वविधौ सा। भूतलतन्वी।।[१]

जिस छन्द में आदि पद में दो ह्रस्व हों, शेष दीर्घ हों, उसे भूतलतन्वी कहा जाता है। यह पञ्चाक्षरा वृत्ति है।

दूषित-तोयं। हन्त! मदीयम्।

जातमपेयं। शोचति गङ्गा।।[२]

हाय। मेरा दूषित जल अब पीने योग्य न रहा – गङ्गा इस प्रकार शोक कर रही है।

मेघ निरुद्धं। प्रेक्ष्य हि चन्द्रम्।

शोचति तारा। ह्यश्रुनिमग्ना।।[३]

बादलों से ढके चन्द्रमा को देख कर आंसुओं में डूबी तारा दुःखी हो रही है।

शशिवदना ।।६ ।।

। । । ।ऽऽ

शशिवदना न्यौ[४]

नसल यमाता।।

जिस छन्द में एक नगण और एक यगण हों, वह शशिवदना छन्द है। यह षडक्षरा वृत्ति है।

---

१. नाoशाo, अo ५६-६o

२. धoकंo, पृo १

३. नाoशाo, अo ५६-६o

४. छoमo, २/६/२, पृo २२

अमरगणानां, पुरि सुखसारा।

सलिलसुधानां, प्रवहति धारा।।[1]

देवताओं की नगरी में सुख देने वाली अमृत जल की धारा (गङ्गा) बहती है।

शशिवदनानां ब्रजतरुणीनाम्।

अधरसुधोर्मिः मधुरिपुरैच्छत्।।[2]

मधुरिपु कृष्ण ने चन्द्रमुखी ब्रजाङ्गनाओं की अधर सुधा की तरङ्गों को पान करने की इच्छा की।

मदलेखा ।।७।।

S SS I I S S

म्सौ गः स्यान्मदलेखा।

मातारा सलगा गा।।[3]

जिसके प्रत्येक चरण में मगण (SSS) सगण (IIS) तथा गुरु होता है उसे मदलेखा छन्द कहते हैं। यह सप्ताक्षरा वृत्ति है।

कालिन्दीं भगिनीवालिङ्गन्ती लहरीभिः।

नीलाङ्गी प्रतिभाति श्रीगङ्गा सलिलाङ्गी।।[4]

कालिन्दी (यमुना) को बहन के समान लहरों से भेंटती हुई जलरूपी अङ्गों वाली गङ्गा नीली दिखाई देती है।

---

१. ध०कं०, पृ० १
२. छ०म०, पृ० २२
३. वही, पृ० २४
४. ध०कं०, पृ० २

रङ्गे बाहुविरुग्णाद्द् दन्तीन्द्रान्मदलेखा।
लग्नाऽभून्मुरशत्रौ कस्तूरीरसचर्चा।।[1]

रङ्गभूमि में भुजाओं से मारे जाने के कारण कुवलयापीड गजेन्द्र की मदलेखा मुरारिकृष्ण के शरीर पर कस्तूरी के अङ्गलेप सी बन गई।

अनुष्टुप्।।८।।

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतु पादयोर्ह्रस्वं, सप्तमं दीर्घमन्ययोः।।[2]

अनुष्टुप् (श्लोक) के प्रत्येक पाद में आठ अक्षर होते हैं। प्रत्येक पाद में छठा अक्षर गुरु और पांचवा अक्षर लघु होता है। दूसरे और चौथे पाद में सातवां अक्षर लघु तथा अन्य (पहले और तीसरे पाद) में सातवां अक्षर दीर्घ होता है। यह अष्टाक्षरा वृत्ति है।

छन्दसां मालिकां कण्ठे बिभ्रती वीचितन्त्रिकाम्।
वादयन्ती लयाबद्धा, ज्ञानगङ्गा पुनातु वः।।

छन्दों की माला को कंण्ठ में धारण करती हुई लय युक्त वीचितन्त्री को बजाती हुई ज्ञानगङ्गा आपको पवित्र करे।

---

१. छ०म०, पृ० २४.

२. श्रुत०, १०

अष्टाक्षरा वृत्ति में अनुष्टुप् के अन्तर्गत चित्रपदा, माणवक, विद्युन्माला, समानिका आदि छन्दों का परिचय छन्दोमञ्जरी में किया गया है। द्र०छ०म०, पृ० २५-२७

प्रमाणिका भी अष्टाक्षरा वृत्ति है।

प्रमाणिका जरौ लगौ
जभान राजभा लगौ

पुनातु भक्तिरच्युता सदाच्युताङ्घ्रिपद्मयोः।
श्रुतिस्मृतिप्रमाणिका भवाम्बुराशितारिका।। छ०म०, पृ० २७

वरदे! बिबुधाराध्ये! जय सर्वसरिद्वरे!

पीयूषसलिले देवि! भागीरथि नमोऽस्तु ते।।[1]

हे वर प्रदान करने वाली! हे विद्वानों द्वारा आराधना करने योग्य, सभी नदियों में श्रेष्ठ, अमृतरूपी जल वाली देवी भागीरथी! तुम्हें नमस्कार है।

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।

जगतः पितरौ वन्दे पार्वती-परमेश्वरौ।।[2]

वाणी (शब्द) और अर्थ के समान नित्य सम्बद्ध (मिले हुए) जगत् के माता-पिता पार्वती और परमेश्वर शिव की मैं वन्दना करता हूँ।

हलमुखी ।।६।।

ऽ।ऽ।। ।।।ऽ

रान्नसाविह हलमुखी

राजभा नसल सलगा।।[3]

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में रगण नगण सगण हों वह हलमुखी है, यह नवाक्षरा वृत्ति है।

स्वर्धुनी सरसलहरी, भूयतां विमलसलिला।

श्यामला लसतु वसुधा, मङ्गला विशदवरदा।।

सरस लहरों वाली स्वर्ग की नदी गंगा निर्मल जल वाली होवे, धरती श्यामल वरदायिनी होकर सुशोभित होवे।

---

१. गं०द० - ३

२. रघु० १-१

३. छ०म०, पृ० ३१

वियोगिनी ।।१०+११।।

। । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

विषमे ससजाः समे गुरुः

। । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

सभरा लोऽथ गुरुर्वियोगिनी।[1]

सलगा सलगा जभान गा

सलगा भानस राजभा लगा।।

जहाँ विषम अर्थात् प्रथम तृतीय चरणों में क्रमशः सगण सगण जगण और एक गुरु तथा सम अर्थात् द्वितीय चतुर्थ चरणों में सगण भगण रगण लघु गुरु हों, वहां वियोगिनी अथवा सुन्दरी नामक छन्द होता है। यह अर्धसम वृत्त है। यहां विषम में दस और सम में ग्यारह अक्षर होते हैं।

कपिल-प्रकृति-प्रदूषण-

प्रभवा-प्राकृतिकी-प्रतिक्रिया।

अनले दहताऽऽशु सागरान्

परितः पीडयतोऽखिलं जगत्।।[2]

कपिल मुनि की अन्तः प्रकृति को प्रदूषित करने के कारण जो प्राकृतिक प्रतिक्रिया हुई, उसने सम्पूर्ण जगत् को पीड़ित करने वाले सगर पुत्रों को शीघ्र ही जला कर राख बना दिया।

मरणं प्रकृतिः शरीरिणां,

विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः।

क्षणमप्यवति ठते श्वसन,

यदि जन्तुर्ननु लाभवानसौ।।[3]

---

१. वृ०र०र० ४/११, पृ० १२४

२. र०गं० २/६

३. रघु० ८/८७

विद्वानों का कथन है कि शरीर धारी प्राणियों की मृत्यु स्वाभाविक प्रकृति है, जीवन विकृति है। अर्थात् जीना विकार है। इसीलिए यदि प्राणी एक क्षण भी जीवित रहे तो उसे समझना चाहिये कि वह लाभ में है। अर्थात् उसे सन्तोष कर लेना चाहिये।

यदवोचत वीक्ष्य मानिनी
परितः स्नेहमयेन चक्षुषा।
अपि वागधिपस्य दुर्वचं,
वचनं तद् विदधीत विस्मयम्।।[1]

स्वाभिमानिनी द्रौपदी ने चारों ओर स्नेहपूर्ण नेत्रों से देखते हुए जो कहा वैसा ब्रह्मा जी भी नहीं कह सकते। अतः निश्चय ही उसके वचन का पालन करना चाहिये।

इन्द्रवज्रा ।।११।।

SS।SS ।। S ।SS

स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।[2]
ताराज ताराज जभान गा गा।।

इन्द्रवज्रा छन्द के प्रत्येक चरण में तगण तगण जगण गुरु गुरु होते हैं, यह एकादशाक्षरा वृत्ति है।

गोष्ठे गिरिं सव्यकरेण धृत्वा
रु टेन्द्रवज्राहतिमुक्तवृ टौ।
यो गोकुलं गोपकुलञ्च सुस्थं
चक्रे स नो रक्षतु चक्रपाणिः।।[3]

---

१. किरात० २/२
२. छ०म०, पृ० ३६
३. वही, पृ० ३६

क्रोधित इन्द्र के द्वारा वज्राघात से की गई वर्षा में गोशाला में बायें हाथ से गोवर्धन पर्वत धारण कर गोसमूह और गोपालों को जिन्होंने विपत्ति से उबारा वे चक्रधारी भगवान् हमारी रक्षा करें।

ब्रह्मद्रवीं निर्गुणतत्त्वरूपां
नीराकृतिं प्राप्य समुच्छलन्तीम्।
ज्ञान-प्रवाहामवलोक्य गङ्गाम्
आचार्यपादः पुलकाञ्चितोऽभूत्।।[1]

ज्ञान रूपी प्रवाह वाली, निर्गुण निराकार ब्रह्मद्रवी गङ्गा को नीराकार रूप में उछलती देख आचार्य शङ्कर पुलकित हो उठे।

उपेन्द्रवज्रा ।।99।।

ISISS IIS ISS

उपेन्द्रवज्रा जतजाः ततो गौ।[2]
जभान ताराज जभान गा गा।।

उपेन्द्रवज्रा के प्रत्येक चरण में जगण, तगण, जगण, गुरु, गुरु होते हैं। यह भी एकादशाक्षरा वृत्ति है।

उपेन्द्रवज्रादिमणिच्छटाभिः
विभू णानां छुरितं वपुस्ते।
स्मरामि गोपीभिरुपास्यमानं
सुरद्रुमूले मणिमण्डपस्थम्।।[3]

---

१. भ०शं०आ०भु० ७/२२
२. वृ०र० - ३/३१
उपेन्द्रवज्रा प्रथमे लघौ सा, छ०म०, पृ० ३७
३. वही, पृ० ३७

हे उपेन्द्र (कृष्ण)! देववृक्ष के नीचे मणियों के मण्डप में वज्र (हीरे) आदि रत्नों की कान्ति से व्याप्त गोपियों द्वारा आराधित होने वाले तुम्हारे शरीर का मैं स्मरण करता हूँ।

उपजाति ।।११।।

ISISSIISISS

अनन्तरोदीरित- लक्ष्मभाजौ

पादौ यदीयावुपजातयः ताः।[1]

ताराज ताराज जभान गा गा

जभान ताराज जभान गा गा।।

उपजाति छन्द में इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के लक्षणों का मिश्रण होता है। यह भी एकादशाक्षरा वृत्ति है।

क्वचिच्च काशांशुकमादधाना

पद्मामननामिन्दुमयूखगौराम्।

प्रफुल्ल-पङ्केरुह-कुड्मलाक्षीं

शरद्वधूं पश्यति सा घनान्ते।[2]

कहीं काश पुष्प की ओढ़नी ओढ़े, कमलों के मुख वाली चन्द्रमा की किरणों से गोरी, खिले हुए कमलपत्रों की आंखों वाली शरद्वधू को वह (गङ्गा) वर्षा के अन्त में देखती है।

पुराणमित्येव न साधु सर्वं

न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।

---

१. छ०म०, पृ० ३८

२. र०गं० ८/८२

सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते
मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः ।।[1]

न पुराने होने से सब काव्य अच्छे होते हैं न नये होने से सब निन्दनीय होते हैं। सन्त (समझदार) जन दोनों को परख कर जो अच्छा होता है उसे अपनाते हैं। मूर्ख जैसा दूसरा समझाते हैं उसे ठीक मानते हैं।

काचिन्मुरारेर्वदनारविन्दं
सङ्क्रान्तमालोक्य जले नवोढा।
व्यक्ते सलज्जा परिचुम्बितं तत्
तदर्थमेवाम्भसि निर्ममज्ज ।।[2]

कोई नवविवाहिता मुरारि (कृष्ण) के मुख कमल को जल में प्रतिबिम्बित देख प्रकाश में लज्जा के कारण उस (प्रतिबिम्ब) को चूमने के लिए जल में ही डूब गई।

रथोद्धता ।।११।।

SIS III S ISIS
रात्परैर्नरलगै रथोद्धता।[3]
SIS III SISIS
राजभा नसल राजभा लगा।।

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में रगण, नगण, रगण लघु गुरु हों उसे रथोद्धता कहते हैं।

---

१. माल० १/२
२. छ०म०, पृ० ३८
३. वही, पृ० ४३

कौशिकेन स किल क्षितीश्वरो
राममध्वर-विघात-शान्तये।
काकपक्षधरमेत्य याचितः
तेजसां हि न वयः समीक्षते।[1]

कुशिक पुत्र विश्वामित्र ने राजा दशरथ से अपने यज्ञ की रक्षा के लिए काकपक्षधारी राम को मांगा। जो तेजस्वी होते हैं उनके विषय में यह विचार नहीं किया जाता कि ये अभी छोटे हैं।

राधिका दधिविलोडनस्थिता
कृष्णवेणुनिनदैरथोद्धृता।
यामुनं तटनिकुञ्जमञ्जसा
सा जगाम सलिलाहृतिच्छलात्।।[2]

दही मथने में लगी हुई राधिका, श्रीकृष्णकी मुरली की धुन सुन कर व्याकुल हो गई और जल लेने के बहाने शीघ्र यमुना तट पर स्थित लता भवन की ओर गई।

द्रुतविलम्बितम् ।।१२।।

। । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ

द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ।[3]
नसल भानस भानस राजभा।।

द्रुतविलम्बितं छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, भगण तथा दो रगण होते हैं। यह द्वादशाक्षरा वृत्ति है।

---

१. रघु ११/१
२. छ०म०, पृ० ३८
३. वही, पृ० ५५

सुकृत-पुञ्ज-निकुञ्ज-निवासिनी

विपुल-पातक-पुञ्ज-विनाशिनी।

झर-झर-स्वन-मञ्जुल-हासिनी

विमल-वारिमयी क्रियतां पुनः।।[1]

पुण्यपुञ्जरूप निकुञ्ज (लतासमूहों) में रहने वाली, विपुल पापों के समूहों को नष्ट करने वाली, सुन्दर चंचल लहरों के विलास वाली गङ्गा को उनके पुत्र पुनः स्वच्छ बनायें।

श्रुतिसुख-भ्रमर-स्वन-गीतयः

कुसुम-कोमल-दन्तरुचो बभुः।

उपवनान्त-लतापवनाहतैः

किसलयैः सलयैरिव पाणिभिः।।[2]

लतायें वन के छोर तक ऐसी सजीव लगती थीं मानो कानों को सुख देने वाले भौंरों के गुञ्जार ही उनके गीत हों। खिले हुए कोमल फूल ही उनके दांतों की कान्ति हों, वायु से हिले शाखा रूपी हाथों से वे अनेक प्रकार के हाव-भाव दिखा रही हों।

तरणिजा पुलिने नववल्लवी

परिषदा सह केलिकुतूहलात्।

द्रुतविलम्बित-चारु-विहारिणं

हरिमहं हृदयेन सदा वहे।।[3]

---

१. रत्नां० ११/२

२. रघु० ९/३५

३. छ०म०, पृ० ५५

यमुना के बालुकामय तीर पर तरुण गोपियों के साथ खेल की इच्छा से तेज तथा मन्थर चालों से मनोज्ञ नृत्य करने वाले श्रीकृष्ण का मैं हृदय में ध्यान करती हूँ।

तोटक ।।१२।।

। । S । । S । । S । । S

वद तोटकमब्धिसकारयुतम्।[1]

सलगा सलगा सलगा सलगा।।

तोटक छन्द में चार सगण होते हैं। यह भी द्वादशाक्षरा वृत्ति है।

घन-गर्जन-घोर-निनादमयी

प्रलयङ्कर-घर्घर-शब्दमयी।

रवपूरित-दुर्धर-धारमयी

वसुधामभियाति तरङ्गमयी।।[2]

बादलों के घोर गर्जन के समान नाद करती हुई, प्रलयङ्कारी घर्घर शब्द करने वाली, रव से भरे दुर्धर धार वाली, तरङ्गमयी श्रीगङ्गा पृथ्वी की ओर आ रही हैं।

स तथेति विनेतुरुदारमतेः

प्रतिगृह्य वचो विससर्ज मुनिम्।

तदलब्धपदं हृदि शोकघने

प्रतियातमिवान्तिकमस्य गुरोः।।[3]

---

१. छ०म०, पृ० ५२

२. र०गं० १/७६

३. रघु० ८/९१

(इन्दुमती की मृत्यु हो जाने पर) विद्वान् गुरु वशिष्ठ का उपदेश शोकाकुल राजा अज ने स्वीकार कर लिया और उनके शिष्य को इस प्रकार विदा किया मानो अपने शोक भरे हृदय में स्थान न दे सकने से उनका उपदेश ही लौटा दिया हो।

यमुना-तटमच्युत-केलिकला-
लसदङ्घ्रि-सरोरुह-सङ्गरुचिम्।
मुदितोऽट कलेरपनेतुमघं
यदि चेच्छसि जन्म निजं सफलम्।।[1]

यदि तुम अपने पापों को दूर कर अपना जन्म सफल करना चाहते हो तो कृष्ण की क्रीड़ा कला से शोभित चरणकमलों से युक्त यमुना तट पर विहार करो।

वंशस्थविलम्।।१२।।

ISI SSI IS IS IS
वदन्ति वंशस्थ- विलं जतौ जरौ।[2]
जभान ताराज जभान राजभा।।

वंशस्थविलं के प्रत्येक चरण में जगण, तगण, जगण, रगण होते हैं। यह भी द्वादशाक्षरा वृत्ति है।

अपि क्रियार्थं सुलभं समित्कुशं
जलान्यपि स्नानविधि-क्षमाणि ते।
अपि स्वशक्त्या तपसि प्रवर्तसे
शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।।[3]

---

१. छ०म०, पृ० ५२
२. वही, पृ० ४६
३. कु०सं० ५/३३

(ब्रह्मचारी बटु के रूप में शिव ने तपस्यारत पार्वती से पूछा-) हे देवि! आपको इस तपोवन में हवन के लिए समिधा, कुशा और स्नान के लिए जल मिल जाता है? आप अपने शरीर के सामर्थ्य के अनुसार ही तप कर रही हैं? धर्म का आचरण करने के लिए पहला साधन शरीर है (अतः शरीर की रक्षा करते हुए तपश्चरण करना चाहिये)।

विलास-वंशस्थविलं मुखानिलैः
प्रपूर्य यः पञ्चमरागमुद्गिरन्।
व्रजाङ्गनानामपि गानशालिनां
जहार मानं स हरिः पुनातु नः।।[1]

जिस कृ ण ने क्रीड़ा करने के लिए मुंह से फूंक कर बांसुरी के छिद्रों को भरा और पञ्चम राग का उच्चारण किया, व्रज वनिताओं और नारद आदि गायकों के अभिमान को दूर किया, वह श्रीकृष्ण हमें पवित्र करें।

भुजङ्गप्रयातम् ।।१२।।

ISSISS IS S ISS
भुजङ्गप्रयातं चतुर्भिर् यकारैः।[2]
यमाता यमाता यमाता यमाता।।

भुजङ्गप्रयात नामक छन्द के प्रत्येक चरण में चार यगण होते हैं।

सदारात्मज-ज्ञाति-भृत्यो विहाय
स्वमेतं ह्रदं जीवनं लिप्समानः।
मया क्लेशितः कालियेत्थं कुरु त्वं
भुजङ्ग! प्रयातं द्रुतं सागराय।।[3]

---

१. छ०म०, पृ० ५०
२. वही, पृ० ५२
३. वही, पृ० ५२

हे कालिय नाग! तुम मेरे (कृष्ण) द्वारा इस प्रकार पीड़ित हो, अतः स्त्री-पुत्र-बान्धव तथा सेवकों सहित इस कुण्ड को छोड़कर अपने जीवन की रक्षा करते हुए समुद्र में चले जाओ।

चिदानन्दरूपेण शिष्येण भक्त्या
यथोक्तं गभीरार्थपूर्णं भुजङ्गम्।
गुरुः शेषरूपस्तथा प्रीतिपूर्णो
ददावाशिषं निर्गतः कन्दरायाः।।[१]

(जब आदिशङ्कर ने 'चिदानन्दरूपः शिवःकेवलोऽहं' कहते हुए अपना परिचय दिया तब) चिद् आनन्द स्वरूप शि य ने जिस प्रकार गम्भीर अर्थ से परिपूर्ण भुजङ्गप्रयात छन्द में अपने स्वरूप का निर्वचन किया, वैसे ही शेषावतार गुरु गोविन्द भगवत्पाद ने गुफा (बिल) से निकल कर उनका आशीर्वाद देते हुए स्वागत किया।

स्रग्विणी ।।१२।।

ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ

रैश्चतुर्भिर्युता स्रग्विणी सम्मता।[२]
राजभा राजभा राजभा राजभा।।

स्रग्विणी के प्रत्येक चरण में चार रगण होते हैं। यह भी द्वादशाक्षरा वृत्ति है।

गोमुखान्निर्गतं निर्मलं पावनं
तापहं पापहं शोक-संहारकम्।

---

१. भ०शं०आ०मु० ३/७०
२. वृ०र० ३/५६

पुष्टिदं तुष्टिदं भुक्तिदं मुक्तिदं

राजते गाङ्गवारि प्रकृष्टं परम्।।[1]

गोमुख से उद्‌गत, पाप, ताप, शोक को नष्ट करने वाला, पुष्टि, तुष्टि और मुक्ति देने वाला गङ्गा का उत्कृष्ट जल सुशोभित है।

शब्दलालित्य-लीलावनं संस्कृतं

चारुमाधुर्य-धारागृहं संस्कृतम्।

विश्वचेतश्चमत्कारकं संस्कृतं

पूर्वजानां यशःस्मारकं संस्कृतम्।।[2]

संस्कृत ललित शब्दों का लीलावन है (अर्थात् इस भाषा के शब्द ललित-कोमल हैं)। यह सुन्दरता और मधुरता की धार वाला है। विश्व के हृदय में चमत्कार उत्पन्न करता है। पूर्वजों के यश का स्मरण दिलाता है।

इन्द्रनीलोपलेनेव या निर्मिता

शातकुम्भद्रवालङ्कृता शोभते।

नव्यमेघच्छविः पीतवासा हरेः

मूर्तिरास्तां जयायोरसि स्रग्विणी।।[3]

जो नवीन मेघ की कान्ति के समान कान्ति वाली, पीताम्बर युक्त होने से मरकत मणि जैसी बनी हुई स्वर्ण रस से सुशोभित है वह हार से अलंकृत मूर्ति हमें विजय दिलाये।

---

१. रगं० १०/२

२. संगौ०गा०श्लो० ७

३. छ०म०, पृ० ५३

पुष्पिताग्रा ।।१२+१३।।

I I I I II S IS IS S

अयुजि न युग रेफतो यकारो

I I I I S I IS I S I SS

युजि च न जौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा।[1]

नसल नसल राजभा यमाता

नसल जभान जभान राजभा गा।।

पुष्पिताग्रा छन्द के प्रथम तृतीय (विषम) चरणों में नगण नगण रगण और यगण होते हैं, तथा द्वितीय और चतुर्थ (सम) चरणों में नगण, जगण, जगण, रगण और गुरु होते हैं। यह अर्धसम वृत्त है।

अथ विधिमवसाय्य शास्त्रदृष्टिं
दिवस-मुखोचितमञ्चिताक्षि-पक्ष्मा।
कुशलविरचितानुकूलवेषः
क्षितिप समाजमगात्स्वयम्वरस्थम्।।[2]

राजकुमार अज ने उठ कर शास्त्र में बताई हुई प्रातःकाल की सब उचित क्रियाएँ कीं और फिर उनके चतुर सेवकों ने उन्हें सुन्दर वस्त्र पहनाए। इस प्रकार सजधज कर वे स्वयंवर के राज समाज की ओर चल पड़े।

करकिसलयशोभया विभान्ती
कुचफलभारविनम्रदेहयष्टिः।
स्मित-रुचिर-विलास-पुष्पिताग्रा
व्रज-युवति-व्रततिर्हरेर्मुदेऽभूत्।।[3]

---

१. छ०म०, पृ० १४५

२. रघु० ५/७६

३. छ०म०, पृ० १४६

कर किसलय (हाथरूपी पल्लव) की शोभा से सुशोभित, पयोधर रूपी फलों के भार से झुकी हुई शरीर वाली, मत्त हास के रुचिर विलास से कुसुम सदृश वदन वाली व्रजाङ्गना रूपी लता श्रीकृ ण के आमोद को बढ़ा रही थी।

आर्या ।।१२+१८।।

।।१२+१५।।

यस्याः पादे प्रथमे
द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये
चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या।।[1]

आर्या मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम और तृतीय चरण में बारह मात्रायें, द्वितीय चरण में अट्ठारह तथा चतुर्थ चरण में पन्द्रह मात्राएँ होती हैं।

SIISS IIS
आपरितोषाद्र विदुषां
I SI SS ISISSS
न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्र।
I III I SISS
बलवदपि शिक्षितानाम्र
S SS S I S SS
आत्मन्यप्रत्ययं चेतः।।[2]

जब तक विद्वान् लोग नाटक को देख कर सन्तोषपूर्वक न कह दें कि नाटक उत्तम है तब तक मैं अपने प्रयोग विज्ञान अर्थात् नाट्य कौशल को उत्तम नहीं कह सकता। क्योंकि जितने अच्छे प्रकार से पात्रों का शिक्षण हुआ हो; किन्तु स्वयं को स्वयं के विषय में विश्वास नहीं होता।

---

१. श्रुत० - ४
२. अभि०शा० १/२

कृष्णः शिशुः सुतो मे
बल्लव-कुलटाभिराहृतो न गृहे।
क्षणमपि वसत्यसाविति
जगाद गोष्ठ्यां यशोदाऽऽर्या।।[1]

आर्या यशोदा ने गोष्ठी में कहा - मेरे शिशुपुत्र कृष्ण को दुष्ट गोपियां बहका कर ले गई हैं, अतः वह घर पर एक क्षण भी नहीं रहता।

प्रहर्षिणी।।१३।।

(यति ३, १०)

SSSII IIS ISISS
त्र्याशाभिर्मन जरगा प्रहर्षिणीयम्।[2]
मातारा नसल जभान राजभा गा।।

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में मगण, नगण, जगण, रगण, गुरु होते हैं उसे प्रहर्षिणी कहते हैं। यह त्रयोदशाक्षरा वृत्ति है। यहां तीन और दस पर यति[3] होती है।

निर्दि टां कुलपतिना स पर्णशालाम्
अध्यास्य प्रयतपरिग्रहद्वितीयः।
तच्छि याऽध्ययन-निवेदितावसानां
संविष्टः कुशशयने निशां निनाय।।[4]

---

१. छ०म०, पृ० १५६ - ५/१

२. छ०म०, पृ० ६३

३. पाठ्य में विराम एवम् उसी के प्रकार भेद यति, विच्छेद आदि का महत्त्व छन्दोगान विधा में सर्वत्र है। ये यति-विरामादि अर्थ बोध में सहायक होते हैं। छन्दोबोध एवम् अर्थ बोध के अभाव में उचित स्थान पर विच्छेद न किये जाने पर अनर्थ अथवा विपरीत अर्थ निकल सकता है। जैसा कि छन्दोमञ्जरीकार कहते हैं -
यतिजिह्वेष्ट-विश्रामस्थानं कविभिरुच्यते।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया।। १/१२ पृ० ११

४. रघु १/६५

कुलपति वशिष्ठ ने जो पर्णकुटी बताई उसी में राजा दिलीप ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए रानी सुदक्षिणा के साथ कुशा की चटाई पर सो गये। प्रातःकाल जब गुरु वशिष्ठ ने शिष्यों को वेद पढ़ाना आरम्भ किया तब उसकी ध्वनि कान में पड़ते ही वे उठ बैठे।

गोपीनामधर-सुधारसस्य पानै -
रुत्तुङ्गस्तनकलशोपगूहनैश्च।
आश्चर्यैरपि रति-विभ्रमैर्मुरारेः
संसारे मतिरभवत् प्रहर्षिणीह।।[1]

इस संसार में गोपियों के अधर-सुधा-रस का पान करने से, उन्नत उरोज रूपी कुम्भों के आलिङ्गनों से तथा अद्भुत रतिविलासों से मुरारि श्रीकृष्ण की आनन्ददायिनी बुद्धि बन गई।

रुचिरा ।।१३।।

ISIS III IIS ISIS
जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्ग्रहैः।[2]
जभान भानस सलगा जभान गा।।

रुचिरा छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, भगण, सगंण, जगण, गुरु होते हैं। यह भी त्रयोदशाक्षरा वृत्ति है।

प्रवर्ततां प्रकृति-हिताय पार्थिवः
सरस्वती श्रुति महती महीयताम्।
ममापि च क्षपयतु नीललोहितः
पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः।।[3]

---

१. छ०म०, पृ० ६३
२. वही, पृ० ६४
३. अभि०शा० ७/३५

राजा सदा अपनी प्रजा की भलाई में लगे रहें, विद्वानों एवं कवियों की वाणी का सर्वत्र आदर हो। चारों ओर अपनी शक्ति फैलाने वाले स्वयंभू महादेव ऐसी कृपा करें कि मेरा पुनर्जन्म समाप्त हो जाय अर्थात् मुझे पुनः जन्म न लेना पड़े।

पुनातु वो हरिरतिरासविभ्रमी
परिभ्रमन् व्रजरुचिराङ्गनान्तरे।
समीरणोल्लसित-लतान्तरालगो
यथा मरुत्तरल-तमालभूरुहः।।[1]

अत्यन्त रास विलास में निपुण श्रीकृष्ण (हरि) समीर (वायु) से हिलती हुई लताओं के मध्य, पवन से चञ्चल तमाल तरुओं से युक्त व्रज में गोपियों के बीच घूमते हुए तुम्हें पवित्र करें।

वसन्ततिलका ।।१४।।

SS ISIIIS IISISS

उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः।[2]
ताराज भानस जभान जभान गा गा।।

वसन्ततिलका के प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण, गुरु, गुरु होते हैं। यह चतुर्दशाक्षरा वृत्ति है।

वेदैरवेद्य-विभुनिर्गुण-निर्विकारं
यन्नेति नेति वचसा श्रुतयो गृणन्ति।
नीराकृतौ परिणतं हि तदेव तत्त्वं
ब्रह्मद्रवेति ऋषिभिः परिगीयमानम्।।[3]

---

१. छ०म०, पृ० ६४
२. वृ०र०, ३/७६, पृ० ७६
३. र०गं० ६/४

जो तत्त्व वेदों से भी ज्ञात नहीं होता, व्यापक, निर्गुण, निर्विकार जिस तत्त्व को श्रुतियां 'नेति नेति' कहती हैं, वही नीराकार रूप में परिणत हो कर ऋषियों द्वारा ब्रह्मद्रव शब्द से कहा जाता है।

तं वीक्ष्य वेपथुमतीं सरसाङ्गयष्टिः
निक्षेपणाय पदमुद्धृतमुद्वहन्ती।
मार्गाचल-व्यतिकराऽऽकुलितेव सिन्धुः
शैलाधिराजतनया न ययौ न तस्थौ।।[1]

(तपोनिरता पार्वती की परीक्षा लेने आये शिव ने जब उनके सामने अपना स्वरूप प्रकट कर दिया तव) उनको देख कर पार्वती के शरीर में कंपकंपी छूट गई। वे पसीने-पसीने हो गईं। आगे चलने को उठाये अपने पैर को उन्होंने जहां का तहां रोक लिया। जैसे धारा के बीच में पहाड़ पड़ जाने से न तो नदी आगे बढ़ पाती है और न पीछे हट पाती है; वैसे ही पर्वतराज हिमालय की पुत्री पार्वती न आगे ही वढ़ पाईं, न पीछे हट पाईं।

फुल्लं वसन्ततिलकं तिलकं वनाल्या
लीलापरं पिककुलं कलमत्र रौति।
वात्येष पु पसुरभिर्मलयाद्रिवातो
यातो हरिः स मथुरां विधिना हताः स्मः।।[2]

वनमाला के तिलक के समान वसन्त ऋतु का तिलक (तिल पुष्प) खिल गया है। क्रीड़ा में रत कोकिलों का समूह पञ्चम स्वर में कूज रहा है। पुष्प के पराग से मनोरम मलयाचल का शीतल, मन्द सुगन्ध समीर वह रहा है, ऐसे वासन्तिक समय में कृष्ण मथुरा चले गये। हम तो दुर्भाग्य के मारे हैं।

---

१. कु०सं० ५/८५
२. छ०म०, पृ० ७३

मालिनी ।।१५।।

(८, ७ पर यति)

। । । । । । ऽऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽऽ

न-न-म-य-य-युतेयं, मालिनी भोगिलोकैः।[1]

नसल नसल माता, रा यमाता यमाता।।

मालिनी छन्द के प्रत्येक चरण में नगण, नगण, मगण, यगण, यगण होते हैं और आठ तथा सातवें अक्षर पर यति होती है। यह पञ्चदशाक्षरा वृत्ति है।

अवतरति यदाऽसौ कम्पमाना धरायां
सपदि मृदुतमाङ्के स्वोर्ध्वबाहुद्वयेन।
दुहितरमिव नीतां सान्त्वयन् तामधीरां
जनक इव विभाति स्नेहसान्द्रोऽद्रिराजः।।[2]

जब यह अलकनन्दा कांपती हुई स्वर्ग से पृथ्वी पर गिरती है तो गिरिराज उसे अपनी ऊंची बांहों में उठा कर कोमल गोद में बैठा लेते हैं, अधीर हुई उसको पुत्री के समान सान्त्वना देते हुए वे स्नेह से आर्द्र हृदय वाले पिता के समान सुशोभित होते हैं।

न खलु न खलु बाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन्
मृदुनि मृगशरीरे तूलराशाविवाऽग्निः।
क्व बत हरिणकानां जीवनं चातिलोलं
क्व च निशितनिपाताः वज्रसाराः शरास्ते।।[3]

(हे राजन् यह आश्रम मृग है) - इस पर बाण कभी न छोड़िये। आपका बाण इस मृग के कोमल शरीर में वैसा ही भयङ्कर है जैसा रुई की ढेर के लिए आग। बताइये - कहां तो हरिणों के कोमल नयन और कहां वज्र के समान कठोर आपके ये तीखे बाण!

---

१. छ०म०, पृ० ८०

२. र०गं० ३/२३

३. अभि०शा० १/१०

मृगमदकृत-चर्चा पीतकौशेयवासा
रुचिरशिखि-शिखण्डाऽऽबद्ध धम्मिल्लपाशा।
अनृजुनिहितमंसे वंशमुत्क्वाणयन्ती
धृतमधुरिपुलीला मालिनी पातु राधा।।[1]

कस्तूरी से चर्चित, पीले कौशेय (रेशमी) वस्त्रों वाली, सुन्दर मोर पंख से बंधी केशपाश वाली, मालायुक्त, कन्धे पर तिरछी बांसुरी रखे बजाती हुई मुरारि श्रीकृष्ण की लीला वाली राधा सब की रक्षा करें।

पञ्चचामर।।१६।।

ISIS ISIS
जरौ जरौ जगाविदं
ISI SISIS
वदन्ति पञ्चचामरम्।[2]
जभान राजभा जभान
राजभा जभान गा।।

पञ्चचामर छन्द के प्रत्येक चरण में जगण, रगण, जगण, रगण गुरु होता है। यह षोडशाक्षरा वृत्ति है। सोलह अक्षरों तक लघु गुरु की आवृत्ति से यह छन्द बन जाता है।

अचिन्त्य-चित्स्वरूपिणीम्
अनन्तमूर्ति-रूपिणीम्।
अजेयशक्ति-शालिनीम्
अभीष्ट-सिद्धि-दायिनीम्।।

---

१. छ०मं०, पृ० ८०
२. वृ०र० ३/८६, पृ० ८१

करे कृपाणधारिणीं
कपाल-माल-शोभिनीम् ।
कराल-काल-रूपिणीं
नमामि कालिकेश्वरीम् ।।[1]

जो अचिन्त्य चित्स्वरूपा हैं, अनन्त मूर्तिरूपा हैं, अजेय शक्तियों से युक्त हैं, अभीष्ट मनोवाञ्छित सिद्धि प्रदान करती हैं, हाथ में खड्ग लिये हैं, कपाल (मुण्ड माला) पहने हैं, भयङ्कर काल के रूप में हैं; उन महाकाली को मैं प्रणाम करती हूँ।

सुरद्रु-मूल-मण्डपे विचित्र-रत्न-निर्मिते।
लसद्-वितान-भूषिते सलील-विभ्रमालसम् ।
सुराङ्गनाभबल्लवी-कर-प्रपञ्च-चामरम्
स्फुरत्-समीरवीजितं सदाच्युतं भजामि तम् ।।[2]

नाना प्रकार की मणियों से सुसज्जित, शोभायमान वितान (चंदोवे) से सुशोभित कल्पवृक्ष के नीचे कौतुकपूर्ण विलास से अलसाये, देवाङ्गनाओं के समान सुन्दर गोपिकाओं के द्वारा झुलाये जाने वाले चँवरों के पवन से सेवित अच्युत (कृष्ण) का मैं सदा भजन करता हूँ।

शिखरिणी ।।१७।।

(६, ११ पर यति)

IS SSSSS IIIIISS IIIS

रसै-रुद्रैश्छिन्ना, यमनसभलागः शिखरिणी ।[3]

यमाता मातारा, नसल सलगा भानस लगा।।

---

१. र०गं० ८/५८-५६

२. छ०मं०, पृ० ८६

३. वही, पृ० ८५

शिखरिणी छन्द के प्रत्येक चरण में यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, लघु और गुरु होते हैं। छठे एवं ग्यारहवें अक्षर पर यति होती है। यह सप्तदशाक्षरा वृत्ति है।

चिदानन्दा संविद्, भवभयविनाशेऽतिचतुरा
निराकारा नित्या, श्रुतिभिरपि न ज्ञातविषया।
नराकारा भूत्वाऽवतरति कदाचिद् भुवि परा
तथा नीराकारा, सरस-रस-धारा विजयते।।[1]

जो चिद् और आनन्द रूपी ज्ञान (संविद्) हैं, भवभय के विनाश में अत्यन्त निपुण हैं, जो नित्य है, वेदों के द्वारा भी जिनका विषय ज्ञात नहीं है वही निराकार परा संविद् कभी नराकार रूप में पृथ्वी पर अवतार लेती है और वही नीराकार होकर सरस रस धारा (गङ्गा) के रूप में सुशोभित होती है।

तरङ्ग-भ्रूभङ्गा, क्षुभित-विहग-श्रेणि-रसना
विकर्षन्ती फेनं, वसनमिव संरम्भ-शिथिलम्।
यथाविद्धं याति, स्खलितमभिसन्धाय बहुशो
नदीभावेनेयं, ध्रुवमसहना सा परिणता।।[2]

(उर्वशी के विरह में व्याकुल पुरुरवा की उक्ति - सद्यः बरसे पानी को देख कर मेरा मन प्रसन्न हो रहा है क्योंकि रास्ते में आने वाली चट्टानों से बचने के लिए यह टेढ़ा-मेढ़ा बह रहा है अतः) इसकी लहरें चढ़ी हुई भौंहों जैसी हैं, व्याकुल पक्षियों की पंक्तियां इसकी करधनी हैं, इसका फेन मानो वह वस्त्र है जो चलने से ढीला पड़ गया है, जिससे वह खिंचती जा रही है। इससे मुझे लग रहा है कि कुपित प्रिया नदी बन गई है।

---

१. र०गं० ६/३४
२. विक्रम० ४/५२

करादस्य भ्रष्टे, ननु शिखरिणी दृश्यति शिशो-
विलीनाः स्मः सत्यं, नियतमवधेयं तदखिलैः।
इति त्र्यस्यद्-गोपानुचित-निभृतालाप-जनितं
स्मितं बिभ्रद् देवो, जगदवतु गोवर्धनधरः।।[१]

अरे! ओ! ऐसे अतिमहान् शिखर वाले गोवर्धन के बहुत छोटे से बालक श्रीकृष्ण के हाथ से गिरते ही निश्चित रूप से हम सब नष्ट हो जायेंगे। अतएव हम सबको अवश्य ध्यान रखना चाहिये - इस प्रकार भयभीत ग्वालों के अनुचित मन्द वार्तालाप को सुन कर मुसकाते हुए गोवर्धनधारी कृष्ण संसार की रक्षा करें।

मन्दाक्रान्ता ।।१७।।

(४, ६, ७ यति)

SSSS II II ISSIS SISS

मन्दाक्रान्ताऽम्बुधि-रस-नगैर्मोभनौ तौ गयुग्मम्।।[२]
मातारा भा, नस नसल ता, राज ताराज गा गा।।

मन्दाक्रान्ता छन्द में प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, भगण, नगण, तगण, तगण, गुरु, गुरु होते हैं। चौथे, छठे तथा सातवें अक्षर पर यति होती है। यह भी सप्तदशाक्षरा वृत्ति है।

त्वामालिख्य, प्रणयकुपितां, धातुरागैः शिलायाम्
आत्मानं ते, चरणपतितुं, यावदिच्छामि कर्तुम्।
अश्रैस्तावन्मुहुरुपचितं, दृष्टिरालुप्यते मे
क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते, सङ्गमं नौ कृतान्तः।।[३]

---

१. छ०म०, पृ० ६५
२. वही, पृ० ६८
३. मेघ०-उ०मे० ४७

(विरही यक्ष का प्रिया के प्रति संदेश) – जब मैं पत्थर की पटिया पर गेरू से तुम्हारी रूठी हुई मुद्रा का चित्र बनाता हूँ और तुम्हें मनाने के लिए तुम्हारे पैरों में गिरना चाहता हूँ उस समय उमड़ते आंसुओं से मेरी दृष्टि (देखने की शक्ति) लुप्त हो जाती है। (मैं तुम्हें देख ही नहीं पाता। चित्र भी नहीं बन पाता।) हाय! क्रूर विधाता चित्र में भी हमारा संयोग नहीं सहता। (अर्थात् चित्र में भी हम एकसाथ नहीं हो पाते।)

प्रेमालापैः प्रियवितरणैः, प्रीणितालिङ्गनाद्यै-
मन्दाक्रान्ता, तदनु नियतं, वश्यतामेति बाला।
एवं शिक्षा-वचन-सुधया, राधिकायाः सखीनां
प्रीतः पायात्, स्मितसुवदनो, देवकीनन्दनो नः।।[1]

प्रीति वचनों तथा प्रियवस्तु प्रदान करने और आलिङ्गन आदि क्रियाओं से सन्तोषित, तत्पश्चात् धीरे-धीरे रमणार्थ प्रेरित बाला अवश्य प्रसन्न हो जाती है। इस प्रकार राधा की सखियों के शिक्षा वचनामृत से प्रसन्न मन्दहास्य से सुशोभित देवकीनन्दन हमारी रक्षा करें।

हरिणी ।।१७।।

(६, ४, ७ – यति)

I I I I I S S S S S I S I I S I S

न-स-म-र-स-ला-गः, षड्वेदै, हयैर्हरिणी मता।।[2]

नसल सलगा, मातारा, रा जभा, सलगा लगा।।

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में नगण, सगण, मगण, रगण, सगण एक लघु तथा एक गुरु हो वह हरिणी छन्द है। इस छन्द में छः, चार, सात पर यति होती है।

---

१. छ०म० पृ० ६८

२. वही, पृ० ६६

अथ स विषय,-व्यावृत्तात्मा, यथाविधि सूनवे
नृपतिककुदं, दत्त्वा यूने, सितातपवारणम्।
मुनिवनतरुच्छायां देव्या, तया सह शिश्रिये
गलित-वयसाम्, इक्ष्वाकूणामिदं हि कुलव्रतम्।।[१]

तब संसार के सब विषय छोड़कर राजा दिलीप ने अपने युवा पुत्र रघु को शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार छत्र-चंवर आदि राजचिह्न सौंप दिये (अर्थात् उनका राज्याभिषेक कर दिया) और देवी सुदक्षिणा के साथ तप करने के लिए वन की ओर प्रस्थान किया। क्योंकि इक्ष्वाकुवंश के राजाओं की यह कुलपरम्परा है कि वृद्धावस्था आने पर वे वानप्रस्थ आश्रम में चले जाते हैं।

पृथ्वी ।।१७।।

(८, ९ यति)

IS III S ISI IIS I SS IS

जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः।[२]
जभान सलगा जभान सलगा यमाता लगा।।

जहां प्रत्येक चरण में जगण सगण जगण सगण यगण लघु गुरु हो वही पृथ्वी छन्द होता है। आठ तथा नौ पर यति होती है।

दुरन्त-दनुजेश्वर-प्रकर-दुःस्थ-पृथ्वीभरं
जहार निजलीलया, यदुकुलेऽवतीर्याशु यः।
स एष जगतां गतिर्, दुरितभारमस्मादृशां
हरिष्यति हरिः स्तुति-स्मरणचाटुभिस्तोषितः।।[३]

---

१. रघु० ३/७०
२. छ०म० पृ० ९६
३. वही पृ० ९६

जिन श्रीकृष्ण ने यदुवंश में अवतार लेकर अनायास ही अपनी लीलाओं से दुर्जेय कंसादि दानवों के समूह से पृथ्वीके भार को हर लिया। वे जगत् के आधार कृष्ण हमारे पापपुञ्जों के भार को हमारी स्तुति, ध्यान तथा मीठे वचनों से प्रसन्न होकर हर देंगे।

स्मृताऽपि तरुणातपं, करुणया हरन्ती नृणाम्
अभङ्गुर-तनु-त्वि ां, वलयिता शतैर्विद्युताम्।।
कलिन्द-गिरि-नन्दिनी, तट-सुरद्रुमालम्बिनी
मदीय-मति-चुम्बिनी, भवतु काऽपि कादम्बिनी।।[1]

जो स्मृति मात्र विषय होकर भी मनु यों के आधिदैविक, आधिभौतिक, आध्यात्मिक-त्रिविध ताप को दया से हर लेती है, जो कभी भग्न न होने वाली शरीर की प्रभा से युक्त विद्युत् की माला से वेष्टित है, जो यमुना के तट पर विराजमान कदम्ब (सुरद्रुम) का आश्रय लिये है - ऐसी घनघटा (श्रीकृष्ण की मनोहर श्यामलमूर्ति) मेरी मति को चूमने वाली बने।

हिरण्यनयनेन भूरपहृता यथा रक्षसा
वराह-वपुषा धृता, दशन-शृङ्गयोर्वि णुना।
तथा कनकलोचनैरहरहो विकास-प्रियैर्
विषेण विषमीकृता, बहुतरं धरा कम्पते।।[2]

जैसे हिरण्याक्ष राक्षस ने पहले पृथ्वी का अपहरण किया, उसका उद्धार करने के लिए विष्णु ने सूकर (वराह) का शरीर धारण किया था। वैसे ही सोने को आंखों में बसाने वाले विकास की चाह रखने वाले (कारपोरेट समाज) के द्वारा विष से विषम बनाई गई प्रदूषण से असन्तुलित की गई पृथ्वी बार-बार कांप रही है।

---

१. रसगं० प्रथमानन पृ० १
२. ध०कं० १०० पृ० ३६

नाराच ।।१८।।

।। ।। ।।ऽ।ऽऽ।ऽऽ। ऽऽ।ऽ

इह न न रचतुष्क-सृष्टन्तु नाराचमाचक्षते।[1]
नसल नसल राजभा राजभा राजभा राजभा।।

नाराच में दो नगण तथा चार रगण होते हैं, यह अष्टादशाक्षरा वृत्ति है।

रघुपतिरपि जातवेदो विशुद्धां प्रगृह्य प्रियां
प्रिय सुहृदि विभी ाणे सङ्गमय्य श्रियं वैरिणः।
रविसुतसहितेन तेनानुयातः ससौमित्रिणा
भुजविजित-विमान-रत्नाधिरूढः प्रतस्थे पुरीम्।।[2]

राम ने रावण की राज्य लक्ष्मी प्रिय मित्र विभीषण को सौंप दी तथा अग्नि में परिशुद्ध अपनी प्रिया सीता को ग्रहण कर, सुग्रीव और लक्ष्मण के साथ अपने बाहुबल से जीते हुए पुष्पक विमान पर आरूढ़ होकर अयोध्यापुरी की ओर प्रस्थान किया।

शार्दूलविक्रीडितम् ।।१९।।

(१२, ७ - यति)

ऽऽऽ।। ऽ ।ऽ ।।।ऽ ऽऽ।ऽऽ।ऽ

सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ, सततगा शार्दूलविक्रीडितम्।[3]
मातारा सलगा जभान सलगा, ताराज ताराज गा।।

शार्दूलविक्रीडित छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण और गुरु होते हैं। यह ऊनविंशत्यक्षरा वृत्ति है। यति बारह एवं सात अक्षर पर होती है।

---

१. छ०म० पृ० १०८

२. रघु० १२/१०४

२. छ०म० पृ० ११५

गङ्गारक्षणमेव भारतभुवः, संरक्षणं शाश्वतम्
गङ्गारक्षणमेव जीवजगतोः, सञ्जीवनं सुन्दरम्।
गङ्गारक्षणमेव वि णुभजनं, स्वर्गापवर्गप्रदम्
गङ्गारक्षणमेव दुर्लभतमं, संसार-सारायितम्।।[1]

गङ्गा की रक्षा भारतभूमि की रक्षा है। गङ्गा से जीव और जगत् का सञ्जीवन सम्भव है। गङ्गा की रक्षा ही स्वर्ग और मोक्ष देने वाला विष्णु भजन है और गङ्गा की रक्षा ही संसार का दुर्लभ सार है।

कार्या सैकतलीन-हंसमिथुना, स्रोतोवहा मालिनी
पादास्तामभितो निषण्णहरिणाः, गौरीगुरोः पावनाः।
शाखालम्बितवल्कलस्य च तरोर्निर्मातुमिच्छाम्यधः
शृङ्गे कृष्णमृगस्य वामनयनं कण्डूयमानां मृगीम्।।[2]

(शकुन्तला के विरह में व्याकुल दुष्यन्त उसका चित्र बना रहा है, उसी सन्दर्भ में विदूषक से कह रहा है कि इस चित्र में क्या-क्या बनाना रह गया है) अभी ऐसी मालिनी नदी बनानी है जिसके रेतीले तट पर हंस के जोड़े वैठे हैं। उसके दोनों ओर हिमालय की तलहटी दिखानी है जिसमें हरिण बैठे हों। मैं ऐसा पेड़ भी चित्र में दिखाना चाहता हूँ जिसकी शाखाओं पर वल्कल वस्त्र टंगे हों और उस पेड़ के नीचे अर्थात् उस की छाया में हरिणी कृष्णसार मृग (काले हरिण) की सींग से अपनी बाईं आँख खुजला रही हो।

गोविन्दं प्रणमोत्तमाङ्ग! रसने! तं घोषयाऽहर्निशं
पाणी पूजय तं मनः स्मर पदे, तस्यालय गच्छतम्।

---

१. र०गं० मङ्गलाचरण १३
२. अभि०शा० ६/१७

एवं चेत् कुरुथाऽखिलं मम हितं, शीर्षादयस्तद् ध्रुवं
न प्रेक्षे भवतां कृते भवमहाशार्दूल-विक्रीडितम्।।[1]

हे सिर! गोविन्द को प्रणाम कर, हे रसने उनके नाम का रात-दिन उच्चारण कर, हे हाथ! तुम दोनों उन्हीं का पूजन करो, हे मन! तू उन्हीं का चिन्तन कर, हे पैर! तुम दोनों उन्हीं के मन्दिर में जाओ, हे मस्तक आदि अङ्गो! यदि तुम सभी मेरा इस प्रकार हित करते रहो, तो आपके लिए संसार रूपी सिंह के आक्रमण को मैं कुछ नहीं गिनता।

गीतिका ।।२०।।

I I S I S I I S I S I I S I S I I S I S

सजजा भरौ सलगा यदा कथिता तदा खलु गीतिका।[2]
सलगा जभान जभान भानस राजभा सलगा लगा।।

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः सगण, जगण, जगण, भगण, रगण, सगण, लघु, गुरु हों, उसे गीतिका कहते हैं। यह विंशत्यक्षरा वृत्ति है।

कमनीय-कुन्द-कदम्ब-किंशुक-केतकी-कुसुमावृता
कलहंस-कीर-कपोत-कोकिल-काकली-कल-नादिता।
सितसारसैः सुमनोहरा सरसीरुहैः सुमनोभरा
वसुधा-सुधा-रसवाहिनी सुरसायतां सुरदीर्घिका।।[3]

मनोहर कुन्द, कदम्ब, पलाश, केवड़ा आदि पु पों से सुशोभित; राजहंस, तोता, कबूतर, कोयल आदि पक्षियों के मधुर कलरव से झङ्कृत, सफेद सारसों से युक्त होने के कारण मनोहर लगने वाली, कमल पुष्पों से भरी हुई, पृथ्वी तल में अमृत रस बहाने वाली देवनदी गङ्गा सुन्दर जल से युक्त होवे अर्थात् प्रदूषणों से मुक्त होकर प्रवाहित होती रहे।

---

१. छ०म०, पृ० ११५
२. वही, पृ० १२०
३. गं०द० मङ्गलाचरण

करताल-चञ्चल-कङ्कणस्वन-मिश्रणेन मनोरम,
रमणीय-वेणु निनाद-रङ्गिम-सङ्गमेन सुखावहा।
बहुलानुराग-निवास-रास-समुद्भवा भवरागिणां,
विदधौ हरिः खलु पल्लवीजन-चारु-चामर-गीतिका।।[1]

हाथों से ताल देने से चञ्चल वलय की ध्वनि से मिश्रित होकर मनोरम, रमणीय वेणु निनाद के लय विशेष के संगम से आनन्द देने वाली, अत्यधिक अनुराग की आश्रयभूत रासक्रीड़ा में गोपियों के मनोहर चामर वाली गीतिका ने कृष्ण को जगत् का प्रेमी बना दिया।

स्रग्धरा।।२१।।

(७, ७, ७-यति)

SSSS ISS IIIIII IS SIS SISS

म्रभ्नैर्यानां त्रयेण, त्रिमुनियतियुता, स्रग्धरा कीर्तितेयम्।[2]
मातारा राजभा भानस नसल यमा ता यमाता यमाता।।

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, यगण, यगण हों; तथा सात सात सात अक्षर पर यति हो वह स्रग्धरा कहलाता है। यह एकविंशत्यक्षरा वृत्ति है।

सर्वासामापगानां, प्रतिनिधिरतुला, पुण्यतोया विशाला
स्वच्छीभूयाऽमृताङ्गा, पुनरपि रुचिराऽपेतदोषा पवित्रा।
सेव्या स्याज्जीवजातैर्विमल-जलमयी भुक्ति-मुक्ति-प्रदात्री
गङ्गा कूले दुकूलायितसितलहरी भासतां भारते नः।।[3]

---

१. छ०म० पृ० १२०
२. वही, पृ० १२३
३. र०गं० ११/३० पृ० १२३

पुण्यतोया यह विशाल गङ्गा सभी नदियों की प्रतिनिधि है, अमृतमय अङ्गों वाली यह स्वच्छ होकर दोष रहित होकर, विमल जलवाली होकर जीव समूहों द्वारा सेव्य हो तथा भुक्ति-मुक्ति प्रदान करे। यह गङ्गा अपने लहरों के दुकूल (पट) से युक्त होकर हमारे भारतवर्ष में सर्वदा सुशोभित होती रहे।

या सृष्टिः स्रष्टुराद्या, वहति विधिहुतं, या हविर्या च होत्री
ये द्वे कालं विधत्तः, श्रुतिविषयगुणा, यास्थिता व्याप्य विश्वम्।
यामाहुः सर्ववीज-प्रकृतिरिति यया, प्राणिनः प्राणवन्तः
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः।।[1]

जो ब्रह्मा की प्रथम सृष्टि है अर्थात् जलरूपा मूर्ति, जो मन्त्र विधि से दी हुई हवि को देवताओं तक पहुंचाती है वह अग्निरूपा मूर्ति, जो हवि द्रव्य प्रदान करती है। वह यजमानरूपा मूर्ति, जो रात और दिन - दो कालों की व्यवस्था करते हैं वह सूर्य-चन्द्र रूपा मूर्ति, जो शब्दगुण वाली है, वह आकाशरूपा मूर्ति, जो सब बीजों को उत्पन्न करने वाली है, वह पृथ्वी रूपा मूर्ति, जिससे सभी प्राणी प्राण वाले हैं वह वायुरूपा मूर्ति - इन आठ प्रत्यक्ष शरीरों (जल, अग्नि, होता, सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथ्वी, वायु) से युक्त शिव आप लोगों का कल्याण करें।

व्याकोषेन्दीवराभा, कनककषलसत्-पीतवासाः सुहासा
बर्हैरुच्चन्द्रकान्तैर्, वलयित-चिकुरा, चारुकर्णावतंसा।
अंसव्यासक्त-वंशी-ध्वनि-सुखितजगद्वल्लवीभिर्लसन्ती।
मूर्तिर्गोपस्य विष्णोरवतु जगति नः स्रग्धरा हारिहारा।।[2]

खिले हुए नील कमल की कान्ति वाली, स्वर्ण रेखा के समान पीले वस्त्रों वाली, मन्द मुसकान से युक्त, मोरपंखों से सुशोभित केशों वाली, सुन्दर

---

१. अभि०शा० १/१
२. छ०म० पृ० १२३

कर्णाभूषणों वाली, कंधे में लगी जो वंशी - उसकी ध्वनि से संसार को आनन्दित करने वाली, गोपियों के साथ विहार करने वाली विष्णु (श्रीकृष्ण) की सुन्दर माला पहनी हुई मूर्ति हमारी रक्षा करे।

सत्ताइस अक्षर से जो पद्यरचना होती है, वह दण्डक कहलाती है। जहां प्रारम्भ में दो नगण और सात रगण होते हैं, वहां चण्डवृष्टिप्रपात, दो नगण सात यगण होने पर प्रचितक, सभी यदि सगण हैं तो कुसुमस्तबक दण्डक होता है।[1] जहां रगणों का गुम्फन कवि की इच्छा पर हो वहां मत्तमातङ्गलीलाकर दण्डक होता है। प्रथम दो नगण उसके पश्चात् उन्नीस रगणों तक क्रमशः सोत्कण्ठ-सार-कासार-विस्तार-संहार-नीहार-मन्दार-केदार -साधार-सत्कार-संस्कार नामक दण्डक होते हैं।[2] कवि इपनी इच्छा से गणों की योजना करता है। किन्तु पदच्छेद सुन्दर होना चाहिए, जिससे उसकी संगीतात्मकता तरङ्गित होती रहे। उदाहरण के रूप में गङ्गादण्डकम् को देखा जा सकता है -

जय सुरधुनि! कोटि-पापौघ-संहारि-शंकारि-संसारभीहारि-चेतस्तमोहारि मोहारि-चिद्वारि-चञ्चच्चमत्कारि-कल्लोलितालोक-कूलङ्कषे! दिव्य-संविद्रसे![3]

इसी प्रकार श्यामलादण्डकम् में भी गेय परिच्छेद है -

जय जननि! सुधासमुद्रान्त-हृद्यन्मणिद्वीप-संरूढ-विल्वाटवीमध्यकल्प-द्रुमाकल्प-कादम्ब-कान्तार-वास-प्रिये! कृत्तिवासप्रिये![4]

---

१. द्र०छ०म० पृ० १३४-१४२ २/१-८

२. वृ०र०ना० ३/११२

३. ध०कं० पृ० ९९

४. ल०मं० पृ० ४३

गद्यविधा में जो काव्यत्व होता है उसका लालित्य अस्फुट संगीतात्मकता को संजोये रहता है, जो सहृदयों को श्रुतिसुभग एवं हृद्य लगता है। दशकुमारचरित, कादम्बरी, शिवराजविजय इत्यादि गद्यकाव्य, चम्पूकाव्य, उत्कलिका इत्यादि इसके चूड़ान्त निदर्शन है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि – *"छन्दःशास्त्र भारतीय वाङ्मय की अद्वितीय विशेषताओं में अन्यतम है। विश्व के किसी भी साहित्य में छन्दों का इतना व्यापक और सूक्ष्म अनुशीलन नहीं हुआ है। जितना संस्कृत साहित्य में विद्यमान है।.....संस्कृत साहित्य का छन्दोवैभव इतना विस्तृत है कि उसे स्वतन्त्र शास्त्र के रूप में मान्यता दी गई।"*[१]

आलङ्कारिक सरसता, छन्द की लयात्मकता और रस एवं भावों की सान्द्र मधुरता संस्कृत भाषा के प्रत्येक वर्ण, पद एवं वाक्य में ऐसी मीठी गूंज भरती है कि हृदय सहज ही पुकार उठता है –

भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाण भारती।
सरला सरसा संस्कृतवाणी।।



१. छ०शा० उ०वि०-अ० १ पृ० १

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

ग्रन्थनाम	लेखक/ सम्पादक	प्रकाशक	वर्ष (ई०)
कालिदास ग्रन्थावली	सीताराम चतुर्वेदी	उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान लखनऊ	१९६७
काव्यादर्श	शिव नारायण शास्त्री	परिमल पब्लिकेशन, दिल्ली	१९८८
किरातार्जुनीयम्	शेष राज शर्मा	चौखम्बा संस्कृत भवन वाराणसी	१९९८
गङ्गादण्डकम्	कमला पाण्डेय	श्रीमाता पब्लिकेशन्स, वाराणसी	१९९८
छन्दःशास्त्र का उद्भव एवं विस्तार	श्रीकिशोर मिश्र	सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी	२००६
छन्दोमञ्जरी	सत्यनारायण शास्त्री	चौखम्बा कृष्णदास अकादमी वाराणसी	२००४
धरा कम्पते	कमला पाण्डेय	गङ्गा साहित्य परिषद् वाराणसी	२००९
नाट्यशास्त्र	बाबूलाल शुक्ल शास्त्री	चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी	१९७२
प्रेम रसायन एवं सङ्गीत मीमांसा	ऊर्मिला शर्मा	राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली	२००२
भगवान् शङ्कराचार्य आविर्भूयात् पुनर्भुवि	कमला पाण्डेय	श्रीविद्या धर्मार्थ न्यास, केदारघाट, वाराणसी	२००७

रक्षत गङ्गाम्	कमला पाण्डेय	श्रीमाता पब्लिकेशन्स, वाराणसी	१९९९
रसगङ्गाधर	बद्रीनाथ झा मदनमोहन झा	चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी	१९७०
ललित-मङ्गलम्	वासुदेव द्विवेदी	सार्वभौम संस्कृत प्रचार संस्थानम् वाराणसी	१९९९
वृत्तरत्नाकर (रत्नप्रभा)	नृसिंह देव शास्त्री	मेहरचन्द्र लक्ष्मीदास, दिल्ली-६	१९७१
वृत्तरत्नाकर (नारायणी)	नारायण भट्ट	चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी	१९०४
वर्णमाला गीतावलि	पं० वासुदेव द्विवेदी	सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय वाराणसी	१९९२
श्रुतबोध	कनकलाल ठक्कुर	चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी	१९६९
संस्कृत-गौरव-गानम्	पं० वासुदेव द्विवेदी	सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय वाराणसी	१९६०



परिचय

नाम - डॉ० कमला पाण्डेय

माता-पिता - श्रीमती पङ्काननी देवी/स्व० नीलाम्बरदत्त पाण्डेय

जन्म - नैनीताल (उत्तराखण्ड)

शिक्षा - काशी-एम०ए० (संस्कृत, का०हि०वि०वि०)

पीएच्०डी० (का०हि०वि०वि०)

साहित्याचार्य लव्धस्वर्णपदक (सं०सं०वि०वि०)

कार्यक्षेत्र - उपाचार्य-संस्कृत विभाग

वसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी (उ०प्र०)

विशेष गतिविधि - संस्थापक अध्यक्ष, संस्कृत-मातृ-मण्डलम्, वाराणसी

कृतित्व चेतना - *रक्षत गङ्गाम्* (संस्कृत महाकाव्य- गाङ्गेय पर्यावरण जागरण के लिए सामाजिक आह्वान।

श्री गङ्गादण्डकम् (गङ्गास्तुति)

भगवान् शङ्कराचार्य आविर्भूयात् पुनर्भुवि (संस्कृत महाकाव्य) *धरा कम्पते* (संस्कृत कवितासंग्रह)

संस्कृत टीका - श्रीगङ्गा-दण्डकम् उपाख्यान-मञ्जरी

सम्पादन - कालिदास वाङ्मय-समीक्षात्मक अध्ययन देववाणी के नये सन्दर्भ

- *संसिद्धि* प्रो० सिद्धेश्वर भट्टाचार्य एवं शास्त्र परम्परा

परियोजना - विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली द्वारा अनुदानित वृहत् शोध परियोजना सम्पन्न

पुरस्कार
* विद्याश्री - ५१०००/- (२०११) विद्याश्री धर्मार्थन्यास, वाराणसी
* साहित्य पुरस्कार (२०१०) (उ०प्र० संस्कृत अकादमी, लखनऊ)
* गङ्गारत्न सम्मान - २१०००/- (गङ्गा साहित्य परिषद् वाराणसी)
* विशिष्ट ग्रन्थ लेखन सम्मान-११०००/- (भारत सरकार-नई दिल्ली)
* साक्षी चेता सम्मान - ११०००/- (कानपुर)

सम्पर्क
- 1. Mob. 9889707825
- 2. Email - rakshatgangam@gmail.com
3. website - www.rakshatgangam.org



छन्दोगान



शारदा संस्कृत संस्थान

जगतगंज, वाराणसी-221 002

फोन : (0542) 2204168 (संस्थान) 2452037 (आवास)

e-mail: sharadabhawan@yahoo.co.in

website: www.sharadasansthan.in

हिन्दुस्तान

www.hindustandainik.co...

भाषा ज्ञान के साथ
ही शुद्ध उच्चारण
जरूरी: डॉ. पांडेय

...निक जागर...

...स्वर पद्यपाठ संस्कृत शिक्षा का अनिवार्य अंग : क...

